भारतीय लोकतंत्र में जाति और धर्म की राजनीति का प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय एवं राजनीतिक विश्लेषण

डॉ. विनोद कुमार,

सहायक प्रोफेसर,

विभाग–राजनीति विज्ञान, संघटक राजकीय महाविद्यालय , पूरनपुर पीलीभीत

सारांश

भारतीय लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा और विविधतापूर्ण लोकतांत्रिक ढांचा है। भारतीय राजनीति की एक प्रमुख विशेषता यह रही है कि आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थाएं पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं—विशेषकर जाति (Caste) और धर्म (Religion)—से अलग नहीं रह सकी हैं। इस शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य भारतीय लोकतंत्र में जाति और धर्म की भूमिका, उनके राजनीतिकरण, चुनाव प्रणाली पर प्रभाव, और राष्ट्रीय एकता तथा शासन व्यवस्था पर इसके दूरगामी परिणामों का गहन और वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करना है।अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता के बाद जहाँ लोकतांत्रिक प्रक्रिया ने वंचित जातियों एवं धार्मिक अल्पसंख्यकों को राजनीतिक चेतना और प्रतिनिधित्व प्रदान किया (जिसे रजनी कोठारी ने "जाति का राजनीतिकरण" और योगेंद्र यादव ने "लोकतांत्रिक उभार" कहा है), वहीं दूसरी ओर इसे केवल वोट-बैंक की राजनीति, तुष्टिकरण और ध्रुवीकरण के साधन के रूप में भी इस्तेमाल किया गया है। यह शोध-पत्र यह प्रतिपादित करता है कि जब तक राजनीतिक दल सामाजिक पहचानों का उपयोग सकारात्मक सशक्तिकरण के बजाय केवल चुनावी लाभ के लिए करेंगे, तब तक लोकतंत्र में नीति-आधारित विकास (Policy-driven Development) और संस्थागत निष्पक्षता प्रभावित होती रहेगी।

मुख्य शब्द: *भारतीय लोकतंत्र, जाति का राजनीतिकरण, धर्मनिरपेक्षता, वोट-बैंक राजनीति, बहुसंख्यकवाद, पहचान की राजनीति ।*

प्रस्तावना

भारत में लोकतंत्र की स्थापना एक ऐतिहासिक घटना थी। जब 1950 में भारतीय संविधान लागू हुआ, तो पाश्चात्य विचारकों का मानना था कि भारत जैसी विशाल अशिक्षा, गरीबी और विविधता वाले देश में लोकतंत्र अधिक समय तक जीवित नहीं रह पाएगा। विशेष रूप से, भारतीय समाज की रीढ़ मानी जाने वाली 'जाति व्यवस्था' और गहरा 'धार्मिक जुड़ाव' आधुनिक पश्चिमी लोकतांत्रिक मूल्यों (जैसे—व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समानता, और बंधुत्व) के विपरीत प्रतीत होते थे।

हालांकि, बीते सात दशकों के अनुभव ने यह साबित किया कि भारतीय लोकतंत्र ने न केवल खुद को संभाला है, बल्कि अपनी जड़ों को गहरा भी किया है। लेकिन इस प्रक्रिया में भारतीय लोकतंत्र ने एक अनोखा मार्ग अपनाया। पश्चिमी मॉडल के विपरीत, जहाँ व्यक्ति (Individual) राजनीति की प्राथमिक इकाई होता है, भारत में समूह पहचान (Group

Identities)—विशेषकर जाति और धर्म—राजनीति की केंद्रीय धुरी बन गईं।

अनुसंधान का उद्देश्य

इस शोध-पत्र का प्राथमिक उद्देश्य निम्नलिखित प्रश्नों की पड़ताल करना है:

1. जाति और धर्म किस प्रकार भारतीय राजनीति के उपकरण और निर्णायक कारक बने?
2. क्या जाति और धर्म की राजनीति ने हाशिए पर खड़े समूहों को सशक्त बनाया है या समाज को विभाजित किया है?
3. उत्तर-मंडल काल (Post-Mandal era) और उत्तर-राममंदिर काल (Post-Ram Janmabhoomi era) के बाद भारतीय राजनीति में क्या वैचारिक और व्यावहारिक परिवर्तन आए हैं?
4. एक परिपक्व लोकतंत्र के निर्माण के लिए जाति और धर्म के अति-राजनीतिकरण को कैसे संतुलित किया जा सकता है?

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)

औपनिवेशिक काल और 'बांटो और राज करो' की नीति

अंग्रेजी हुकूमत ने भारत में अपने शासन को स्थायित्व देने के लिए भारतीय समाज की आंतरिक दरारों का उपयोग किया।

- **1881 की जनगणना (Census of 1881):** अंग्रेजों ने पहली बार बड़े पैमाने पर जाति-आधारित जनगणना कराई, जिसने जातियों को एक निश्चित और कठोर राजनीतिक और सामाजिक श्रेणी में बदल दिया (जैसा कि निकोलस डिर्क्स ने अपनी पुस्तक *Castes of Mind* में रेखांकित किया है)।
- **पृथक निर्वाचक मंडल (Separate Electorate):** 1909 के मार्ले-मिंटो सुधारों ने मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन क्षेत्र की व्यवस्था की, जिसने धर्म के आधार पर राजनीति का वैधानिक बीजारोपण किया। बाद में 1919 और 1935 के अधिनियमों में इसका विस्तार किया गया।
- **कम्यूनल अवॉर्ड (1932):** दलितों के लिए पृथक निर्वाचन की व्यवस्था ने जातिगत विभाजन को और गहरा किया, जिसके विरोध में महात्मा गांधी और डॉ. बी.आर. अंबेडकर के बीच 'पूना पैक्ट' (Poona Pact) हुआ।

स्वतंत्रता के समय संवैधानिक ढांचा

स्वतंत्रता सेनानियों और संविधान निर्माताओं ने एक धर्मनिरपेक्ष और समतावादी भारत का सपना देखा था।

- **अनुच्छेद 15, 16 और 17:** जाति, धर्म, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करते हैं और अस्पृश्यता का अंत करते हैं।
- **सकारात्मक कार्रवाई (Affirmative Action):** अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST) के लिए विधायिका, शिक्षा और सरकारी नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था की गई ताकि सदियों के ऐतिहासिक अन्याय की भरपाई की जा सके।

भारतीय राजनीति में जाति का प्रभाव (Impact of Caste in Indian Politics)

जाति केवल एक सामाजिक व्यवस्था नहीं है, बल्कि भारत में यह एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति है। राजनीतिक विज्ञानी रजनी कोठारी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *Caste in Indian Politics* (1970) में तर्क

दिया था कि "भारत में राजनीति ने जाति का राजनीतिकरण किया है और जाति ने राजनीति का समाजीकरण किया है।"

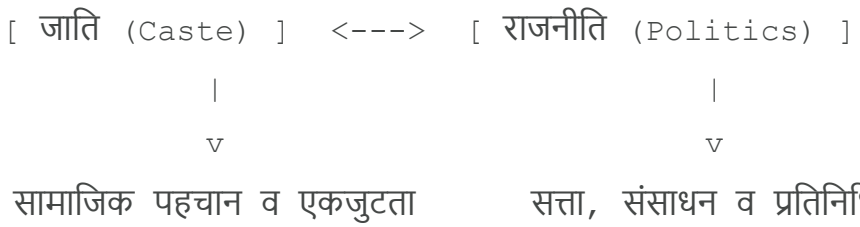

जाति के राजनीतिकरण के चरण

1. **प्रथम चरण (1950-1960 का दशक - कांग्रेस प्रणाली):** इस दौर में उच्च जातियों का राजनीति पर प्रभुत्व था। कांग्रेस पार्टी ने विभिन्न जातियों के बीच एक लचीला गठबंधन बनाए रखा, जिसे रजनी कोठारी ने 'कांग्रेस सिस्टम' कहा।
2. **द्वितीय चरण (1970-1980 का दशक - मध्यवर्ती जातियों का उभार):** हरित क्रांति (Green Revolution) के कारण ग्रामीण भारत में पिछड़ी जातियों (जैसे यादव, कुर्मी, जाट, मराठा) की आर्थिक स्थिति मजबूत हुई। चौधरी चरण सिंह जैसे नेताओं ने इन जातियों को राजनीतिक मंच प्रदान किया।
3. **तृतीय चरण (1990 के बाद - मंडल काल और दलित उभार):** मंडल आयोग की सिफारिशों (OBC आरक्षण) के लागू होने और बहुजन समाज पार्टी (BSP) के उदय के साथ ही 'निम्न जातियों' की राजनीति का स्वर्णिम युग शुरू हुआ। योगेंद्र यादव इसे भारतीय लोकतंत्र का "द्वितीय लोकतांत्रिक उभार" (Second Democratic Upsurge) कहते हैं।

चुनावी प्रक्रिया में जाति की भूमिका

- **उम्मीदवार का चयन:** कोई भी राजनीतिक दल किसी भी निर्वाचन क्षेत्र से प्रत्याशी तय करते समय उस क्षेत्र के 'जातीय समीकरण' (Caste Arithmetic) को प्राथमिकता देता है।
- **जातिगत वोट बैंक (Vote Bank Politics):** दलों द्वारा विशिष्ट जातियों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए रणनीतियां बनाई जाती हैं। उदाहरण स्वरूप, उत्तर प्रदेश में 'MY' (मुस्लिम-यादव) या 'ब्राह्मण-दलित-मुस्लिम' समीकरण।
- **दबाव समूह (Pressure Groups):** अखिल भारतीय जाट महासभा, करणी सेना, मराठा क्रांति मोर्चा आदि जैसी संस्थाएं सरकार पर अपनी मांगों को लेकर राजनीतिक दबाव बनाती हैं।

भारतीय राजनीति में धर्म का प्रभाव (Impact of Religion in Indian Politics)

भारत एक बहु-धार्मिक देश है जहाँ धर्म केवल व्यक्तिगत आस्था का विषय न होकर सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान का सबसे बड़ा माध्यम है। भारतीय राजनीति में धर्म का प्रभाव अत्यंत जटिल और संवेदनशील रहा है।

धर्मनिरपेक्षता का भारतीय मॉडल

पश्चिमी मॉडल जहाँ धर्म और राज्य के बीच पूर्ण पृथक्करण (Strict Separation) की बात करता है, वहीं भारतीय मॉडल "सर्वधर्म समभाव" और राज्य

द्वारा सभी धर्मों के प्रति 'समान दूरी' या 'समान आदर' के सिद्धांत पर आधारित है। हालांकि, व्यावहारिक राजनीति में इस सिद्धांत की मनमाफिक व्याख्या की जाती रही है।

धार्मिक ध्रुवीकरण और तुष्टिकरण

- **शाह बानो मामला (1985) और तुष्टिकरण के आरोप:** इस मामले के बाद भारतीय राजनीति में 'सच्ची धर्मनिरपेक्षता' बनाम 'छद्म धर्मनिरपेक्षता' (Pseudo-secularism) की बहस तेज हुई।
- **राम जन्मभूमि आंदोलन:** 1980 के दशक के उत्तरार्ध और 1990 के दशक की शुरुआत में लालकृष्ण आडवाणी की रथ यात्रा और अयोध्या आंदोलन ने भारतीय राजनीति को 'मंडल' (जाति) के जवाब में 'कमंडल' (धार्मिक एकजुटता) की दिशा में मोड़ दिया। इसने भारतीय जनता पार्टी (BJP) को एक प्रमुख राष्ट्रीय शक्ति के रूप में स्थापित किया।
- **सच्चर समिति की रिपोर्ट (2006):** इस रिपोर्ट ने उजागर किया कि धर्मनिरपेक्ष राजनीति के दावों के बावजूद भारतीय मुसलमानों की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति अत्यंत दयनीय बनी हुई है, जिसने वोट-बैंक राजनीति की पोल खोल दी।

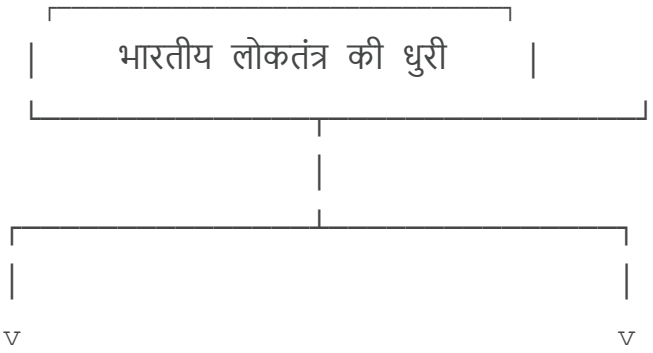

[जाति की राजनीति]

- सामाजिक न्याय
- प्रतिनिधित्व एवं आरक्षण
- मंडल आंदोलन

[धर्म की राजनीति]

- सांस्कृतिक राष्ट्रवाद
- धार्मिक ध्रुवीकरण
- कमंडल / राम मंदिर

जाति और धर्म की राजनीति के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलू

क्षेत्र	**सकारात्मक प्रभाव (Positive Impacts)**	**नकारात्मक प्रभाव (Negative Impacts)**
राजनीतिक भागीदारी	वंचित और शोषित वर्गों में राजनीतिक चेतना का विकास हुआ।	विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा जैसे वास्तविक मुद्दे गौण हो जाते हैं।
सामाजिक न्याय	पिछड़े और दलित समाज को शासन और प्रशासन में हिस्सेदारी मिली।	समाज में अंतर-जातीय और अंतर-धार्मिक वैमनस्य एवं तनाव बढ़ता है।
लोकतांत्रिक गहराई	लोकतंत्र आम जनता की दहलीज तक पहुँचा; मतदान प्रतिशत बढ़ा।	हिंसा, दंगे (Communal Riots) और राजनीतिक घृणा को बढ़ावा मिलता है।
संस्थागत प्रभाव	बहुलवादी व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता मिली।	प्रशासनिक निष्पक्षता और योग्यता (Merit) से समझौते की संभावना रहती है।

आधुनिक दौर में नया मोड़: विकास बनाम पहचान (Development vs. Identity)

21वीं सदी के दूसरे और तीसरे दशक में (2010 के बाद), भारतीय राजनीति में एक नया रुझान देखा जा रहा है।

1. **लाभार्थी वर्ग (Beneficiary Class) का उदय:** कल्याणकारी योजनाओं (जैसे—आवास, गैस सिलेंडर, शौचालय, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण) ने जाति और धर्म की सीमाओं से परे एक नए 'लाभार्थी' वोट बैंक का निर्माण किया है।
2. **जातिगत उप-विभाजन (Sub-categorization):** राजनीतिक दल अब केवल मोटे जातीय समूहों (जैसे OBC या Dalit) के बजाय गैर-यादव OBC या गैर-जाटव दलित जैसी सूक्ष्म-जातियों (Micro-castes) को साधने का प्रयास कर रहे हैं।
3. **सांस्कृतिक राष्ट्रवाद (Cultural Nationalism):** धर्म-आधारित राजनीति अब केवल पूजा-पद्धति तक सीमित न रहकर एक वृहद सांस्कृतिक पहचान और 'राष्ट्रवाद' के आवरण में प्रस्तुत की जा रही है।
4. **लाभार्थी वर्ग का निर्माण (*The New Labharthi Class*):** जातियों और धर्मों की सीमाओं से परे जाकर, विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं (आवास, शौचालय, मुफ्त राशन, DBT) के माध्यम से एक नया 'लाभार्थी' वोट बैंक तैयार हुआ है।
5. **उप-जातीय विभाजन (*Sub-categorization*):** राजनीतिक दलों द्वारा गैर-यादव OBC या गैर-जाटव SC जैसे उप-समूहों को लामबंद करके पारंपरिक जातीय किलेबंदी को तोड़ा जा रहा है।
6. **डिजिटल राजनीति और सोशल मीडिया:** व्हाट्सएप, फेसबुक और यूट्यूब के माध्यम से धार्मिक एवं जातीय नैरेटिव का तेजी से प्रसार हो रहा है, जिससे ध्रुवीकरण की प्रक्रिया और अधिक तीव्र हुई है।

निष्कर्ष एवं सुझाव (Conclusion & Recommendations)

भारतीय लोकतंत्र में जाति और धर्म की राजनीति को पूरी तरह से समाप्त करना न तो व्यावहारिक है और न ही संभव, क्योंकि ये भारतीय समाज की मौलिक संरचनात्मक इकाइयां हैं। हालांकि, जब तक राजनीति का आधार केवल पहचान रहेगा, तब तक वास्तविक विकास और सुशासन की गति धीमी रहेगी।

प्रमुख सुझाव

- **नीति-आधारित राजनीति को प्रोत्साहन:** राजनीतिक दलों को जाति-धर्म के समीकरणों से ऊपर उठकर स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार और पर्यावरण जैसे मुद्दों पर चुनाव लड़ना चाहिए।
- **चुनाव आयोग की सख्त भूमिका:** जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (Representation of the People Act) की धारा 123(3) का कड़ाई से पालन होना चाहिए, जो धर्म, जाति, समुदाय या भाषा के आधार पर वोट मांगने को भ्रष्ट आचरण मानती है।
- **नागरिक समाज और शिक्षा का प्रसार:** शिक्षा का प्रसार और वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Scientific Temper) का विकास ही नागरिकों को संकीर्ण पहचान आधारित राजनीति के जाल से बाहर निकाल सकता है।

संदर्भ सूची (References)

1. **Ambedkar, B. R.** (1936). *Annihilation of Caste*. Baamcef Publications.
2. **Chandra, Kanchan.** (2004). *Why Ethnic Parties Succeed: Patronages and Ethnic Headcounts in India*. Cambridge University Press.
3. **Dirks, Nicholas B.** (2001). *Castes of Mind: Colonialism and the Making of Modern India*. Princeton University Press.
4. **Hasan, Zoya.** (2002). *Parties and Party Politics in India*. Oxford University Press.
5. **Jaffrelot, Christophe.** (2003). *India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India*. C. Hurst & Co. Publishers.
6. **Kothari, Rajni.** (1970). *Caste in Indian Politics*. Orient Longman.
7. **Jha, M. N.** (2019). "भारतीय राजनीति में जाति एवं धर्म का बढ़ता प्रभाव". *Journal of Political Studies*, 12(2), 45-58.
8. **Varshney, Ashutosh.** (2002). *Ethnic Conflict and Civic Life: Hindus and Muslims in India*. Yale University Press.
9. **Yadav, Yogendra.** (1999). "Understanding the Second Democratic Upsurge: Trends of Bahujan Participation in Electoral Politics in the 1990s". In *Transforming India: Social and Political Dynamics of Democracy*. Oxford University Press.